संस्कृत-प्रचार-पुस्तक-माला संख्या १५.

नीति-शिक्षा

[संस्कृत साहित्य के विभिन्न नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों से संकलित सर्वसाधारणोपयोगी अत्युत्तम नीतिशिक्षाओं का संग्रह]

प्रथम भाग



प्रकाशक

सार्वभौम-संस्कृत-प्रचार-कार्यालय

वा रा ण सी

कृत-प्रचार-पुस्तक-माला संख्या १५.

नीति-शिक्षा

[संस्कृत साहित्य के विभिन्न नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों से संकलित सर्वसाधारणोपयोगी अत्युत्तम नीतिशिक्षाओं का संग्रह]

प्रथम भाग

सम्पादक —

श्री वासुदेवद्विवेदी शास्त्री

(सम्पादक — संस्कृत-प्रचार-पुस्तकमाला)

प्रकाशक

सार्वभौम-संस्कृत-प्रचार-कार्यालय

वाराणसी

चतुर्थ आवृत्ति : एक हजार
मूल्य : एक रुपया, बीस पैसे

मुद्रक—
बैजनाथ प्रसाद
कल्पना प्रेस
रामकटोरा रोड, वाराणसी

आवश्यक निवेदन

संस्कृतसाहित्य के अनेक नीतिग्रन्थों में जो असंख्य नीतिशिक्षायें हैं वे व्यवहार के क्षेत्र में मानवसमाज की एक अनुपम निधि हैं और यदि कोई भी मनुष्य उन शिक्षाओं का अध्ययन कर उनके अनुसार व्यवहार करने का प्रयत्न करे तो इसमें संदेह नहीं कि वह अपनी जीवनयात्रा को बहुत सफलता के साथ पार लगा सकता है। नीतिशास्त्र संस्कृतसाहित्य का वह अंग है जो न कभी पुराना हो सकता है न अनुपयोगी। वह जब तक मानव-समाज रहेगा तब तक उसका पथ-प्रदर्शन करता रहेगा और सबका कल्याणसाधन बना रहेगा।

इसी उपयोगिता के कारण कार्यालय द्वारा उन समस्त नीतिशिक्षाओं का अनेक भागों में हिन्दी-अनुवाद के साथ प्रकाशन करने का निश्चय किया गया है। तदनुसार ही यह प्रथम भाग प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें उन्हीं शिक्षाओं का संकलन किया गया है जो सूत्र के रूप में हैं अथवा किसी श्लोक के एक या दो चरणों में ही समाप्त हो जाती हैं। इस पुस्तक के द्वितीय भाग में विषयानुसार ही शिक्षाओं का प्रकाशन होगा और पूरे श्लोक भी दे दिये जायँगे।

आशा है इस पुस्तक के पढ़ने से पाठकों को व्यावहारिक जीवन में सहायता मिलेगी और संस्कृतसाहित्य का थोड़ा बहुत परिचय भी प्राप्त होगा।

वैशाखपूर्णिमा
२०३५

विनीत
सम्पादक

मूल ग्रन्थों की सूची

—:०:—

नीति-शिक्षा

१—शुक्राचार्यप्रणीत "शुक्रनीति" से संकलित शिक्षायें

१—काले हितं मितं ब्रूयात् । ३-१०

सामयिक, हितकर तथा परिमित वचन बोलना चाहिये ।

२—न स्पर्धेत बलीयसा । ३-५१

अपने से अधिक बलवान् लोगों का मुकाबला नहीं करना चाहिये ।

३—एकोऽर्थान् न विचिन्तयेत् । ३-५२

किसी गम्भीर विषय पर विचार-विमर्श और उसका निश्चय अकेले नहीं करना चाहिये । दो-चार और सुयोग्य पुरुषों से सम्मति ले लेनी चाहिये ।

४—नैकः सुप्तेषु जागृयात् । ३-५२

जहाँ सब लोग सो गये हों वहाँ किसी व्यक्ति को अकेले नहीं जागना चाहिये । क्योंकि ऐसा करने से उस व्यक्तिपर चोरी आदि करने की शंका हो सकती है ।

५—अविचार्योत्तरं देयम् सहसा न वदेत् क्वचित् । ३-६४

सोच समझकर उत्तर देना चाहिये । सहसा मुँह से कोई बात नहीं निकाल देनी चाहिये । अन्यथा पीछे पछताना पड़ता है और दुःख भी उठाना पड़ता है ।

६—शत्रोरपि गुणा ग्राह्याः

गुरोः त्याज्यास्तु दुर्गुणाः । ३-६५

शत्रु में भी यदि सद्गुण हों तो उनका ग्रहण करना चाहिये और गुरु में भी यदि दुर्गुण हों तो उनका परित्याग कर देना चाहिये ।

७—दीर्घदर्शी सदा च स्यात् । ३-६७

सदा दूरदर्शी होना चाहिये । किसी भी बात के परिणाम आदि का दूर तक विचार करना चाहिये और दूर की बातों को भी सोचने-समझने की शक्ति रखनी चाहिये ।

८—नाऽत्यन्तं विश्वसेत् कञ्चित् । ३-७७

किसी भी व्यक्ति पर अत्यन्त विश्वास नहीं करना चाहिये । साधारणतया सबपर विश्वास रखते हुए भी इससे सतर्क भी रहना चाहिये ।

९—प्रामाणिकं चानुभूतम् आप्तं सर्वत्र विश्वसेत् । ३-७८

जो व्यक्ति प्रामाणिक हों, जिनकी एक दो बार परीक्षा कर ली गई हो तथा जो यथार्थवादी हों उनपर सदा विश्वास करना चाहिये ।

१०—कदापि नोग्रदण्डः स्यात् कटुभाषणतत्परः ।
३-८१

किसी को भी बहुत कठोर दण्ड नहीं देना चाहिये और न सदा कटु वचन ही बोलते रहना चाहिये।

११—उपेक्षेत प्रनष्टं यत् । ३-९४

जो वस्तु नष्ट हो गई हो उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

१२—प्राप्तं यत् तदुपाहरेत् । ३-९४

जो वस्तु उचित मार्ग से मिल जाय उसे ले लेना चाहिये।

१३—परद्रव्यं क्षुद्रमपि नाऽदत्तं संहरेदणु । ३-९५

दूसरे का कोई द्रव्य, चाहे बहुत छोटा और थोड़ा ही क्यों न हो, बिना दिये नहीं लेना चाहिये।

१४—ऋणशेषं रोगशेषं शत्रुशेषं न रक्षयेत् । ३-१०४

ऋण रोग, और शत्रु इन तीनों को बिलकुल समाप्त कर देना चाहिये। इनमें से किसी में से कुछ बाकी नहीं रखना चाहिये। नहीं तो वह पुनः बढ़कर भयंकर हो जाता है।

१५—नाऽकार्यें तु मतिं कुर्यात् । ३-११२

निन्दित और निरर्थक काम करने की बात मन में नहीं ले आनी चाहिये।

१६—कृत्वा स्वतन्त्रां तरुणीं स्त्रियं गच्छेत् न वै क्वचित् ।
३-११५

युवती स्त्री को स्वतन्त्र छोड़कर कहीं परदेश आदि में नहीं जाना चाहिये। उसे किसी की देख-रेख में रखकर ही कहीं अधिक दिन के लिये जाना चाहिये।

१७—न प्रमाद्येत् मदद्रव्यैः। ३-११६

मादक द्रव्यों का सेवन कर प्रमादी नही बनना चाहिये।

१८—सशंकितानां सामीप्यं त्यजेद्वै नीचसेवनम्।
३-१३९

जो लोग अपनी दुश्चरित्रता के कारण शंकित रहते हैं तथा जो नीच लोग हैं उनका साथ नही करना चाहिये। क्योंकि ऐसे लोगोंका साथ करने से सज्जन पुरुष भी कलंकित हो जाते हैं।

१९—संलापं नैव श्रृणुयात् गुप्तः कस्यापि सर्वदा।
३-१३९

किसी के भी गुप्त वार्तालाप को कभी छिपकर नहीं सुनना चाहिये।

२०—अत्यावश्यम् अनावश्यम् क्रमात् कार्यं विचिन्तयेत्। ३-१४४

कौन काम अत्यावश्यक है और कौन काम कम आवश्यक, इस बात का विचार कर उनका क्रमशः सम्पादन करना चाहिये।

२१—नैको गच्छेद् व्याल-व्याघ्र-चोरेषु च प्रबाधितुम्।
३-१५७

साँप, बाघ तथा चोर आदि भयंकर जीवों को मारने के लिये अकेले नहीं जाना चाहिये।

२२—कलहे न सहायः स्यात् । ३-१५८

किसीके लड़ाई-झगड़ेके बढ़ानेमें मददगार नहीं होना चाहिये। जहाँ तक हो सके किसीके भी वैर-विरोध और लड़ाई-झगड़ेको शान्त करनेका ही प्रयत्न करना चाहिये।

२३—न लेखेन विना कुर्याद् व्यवहारं सदा बुधः ।
३-१८२

बिना लिखा-पढ़ी के रुपये-पैसे का लेन-देन नहीं करना चाहिये। जब कभी किसी को रुपये आदि देने हों तो उसे लिख कर देना चाहिये।

२४—दद्यात् गृहीतमिव नो चोभयोः क्लेशकृत् यथा ।
३-१९६

किसी से ऋण या उधार के रूप में लिया हुआ सामान इस प्रकार पुनः लौटा देना चाहियें जिससे लेने और देने वाले में से किसी को भी क्लेश न हो।

२५—पराधीनं नैव कुर्यात् तरुणी-धन-पुस्तकम् ।
३-२१७

तरुणी स्त्री, धन और पुस्तक इन तीन वस्तुओं को दूसरे के अधीन नहीं करना चाहिये। क्यों कि दूसरों के घर ये तीनों वस्तुयें बिना कुछ खराब हुए नहीं रहतीं।

२६—न च हिंस्रमुपेक्षेत शक्तो हन्याच्च तत्क्षणे ।
३-२२९

हिंसक जीव-जन्तुओं को सामने पड़ने पर उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये और अपने में सामर्थ्य हो तो उन्हें तत्काल मार भी देना चाहिये।

२७—यथार्थमपि न ब्रूयाद् बलवद्विपरीतकम् । ३-३०२

अपने से बलवान् व्यक्ति के विरुद्ध यदि कोई यथार्थ बात भी हो तो उसे नहीं कहना चाहिये ।

२८—मूकोऽन्धो बधिरः खञ्जः स्वापत्काले भवेन्नरः । ३-३०३

अपने ऊपर आपत्ति काल के आने पर गूँगा, अन्धा, बहरा तथा लँगड़ा बनकर किसी तरह अपना काम निकालना चाहिये और समय काट लेना चाहिये ।

२९—गृहीत्वाऽन्यविवादं तु विवदेत् नैव केनचित् । ३-२०८

दूसरों के झगड़े को मोल लेकर किसी के साथ झगड़ा-तकरार नहीं करना चाहिये ।

३०—सदैव सावधानः स्यात् । १-१८३

जीवन के किसी भी क्षण में सदा सावधान रहना चाहिए । क्यों कि जो पुरुष अपने काम में सावधान नहीं रहते वे पग-पग पर ठोकर खाते हैं ।

३१—यत्कार्ये यो नियुक्तः स्यात् भूयात् तत्कार्यतत्परः । ३-१२७

जो व्यक्ति जिस काम में लगाया गया हो उसे वह काम खूब तत्परता के साथ करना चाहिये । कभी भी अपने काम में शिथिलता नहीं आने देनी चाहिये ।

३२—राजा परममित्रोऽस्ति न कामं विचरेदिति । २-१३१

यदि किसी राजा, शासक या अफसर से मित्रता हो तो उसके अभिमान में आकर कोई अनुचित काम नहीं करते रहना चाहिये।

३३—आरम्भं तस्य कुर्याद्धि यत् समाप्तिं सुखं व्रजेत् ।
४-२११

उसी काम का आरम्भ करना चाहिये जिसकी अच्छी तरह समाप्ति हो जाय ।

३४—रोगः शत्रुर्नावमान्योऽप्यल्प इत्युपचारतः ।
३-१०२

यदि रोग और शत्रु छोटे हों तब भी उन्हें छोटा समझ कर उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये । उन्हें यथा शीघ्र दबा देने की ही चेष्टा करनी चाहिये ।

३५—अति सर्व नाशहेतु स्वतोऽत्यन्तं विवर्जयेत् ।
३२१०

किसी भी काम में अति करना अपने ही नाश का कारण होता है अतः किसी भी काम में कभी भी अति नहीं करना चाहिये ।

३६—न च व्ययाधिकं कार्यं कर्तुमीहेत पण्डितः ।
३-२१८

बुद्धिमान् पुरुष को ऐसा कोई काम नहो करना चाहिये जिसमें आय से अधिक व्यय होता हो ।

२—आचार्य कामन्दक प्रणीत "कामन्दकीय नीतिसार" से संकलित शिक्षायें

१—अमित्राण्यपि कुर्वीत मित्राण्युपचयावहान् । ८-८३

यदि अपने शत्रु भी भविष्य में अपने लिए हितकारक प्रतीत होते हों तो उनसे मित्रता कर लेनी चाहिये ।

२—अहिते वर्तमानानि मित्राण्यपि परित्यजेत् । ८-७३

यदि अपने मित्र भी अपना अहित करते हों तो उनका परित्याग कर देना चाहिए ।

३—न ह्यविज्ञाय तत्त्वेन कोपं कुर्यात् कदाचन । ८-७७

किसी भी बात को बिना ठीक-ठीक समझे उसके लिये कोप नहीं करना चाहिये । नहीं तो फिर पीछे पछताना पड़ता है ।

४—रिपवो येन जायन्ते कारणं तत् परित्यजेत् ।

जिस कारण से किसी के साथ शत्रुता होती हो उस कारण का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये । जहाँ तक हो सके शत्रुता उत्पन्न करने वाली बातों से दूर रहना चाहिये और ऐसा ही काम करना चाहिये जिससे लोगों के साथ अधिक से अधिक मित्रता हो ।

३—महाभारत के शान्तिपर्व से संकलित शिक्षायें

१—चरेद्धर्मान् अकटुकः ।

धर्म का आचरण करना चाहिये परन्तु अपने आचरण में कटुता नहीं आने देनी चाहिये।

२—मुञ्चेत् स्नेहं न चास्तिकः ।

आस्तिक होना चाहिये पर आस्तिक होते हुए भी किसी के साथ नीरस व्यवहार नहीं करना चाहिये ।

३—अनृशंसः चरेदर्थम् ।

अर्थोपार्जन करना चाहिये, परन्तु दूसरों को कष्ट देकर नहीं ।

४—चरेत् कामम् अनुद्धतः ।

विषय-सुखों का उपभोग करना चाहिये, परन्तु मर्यादा का उल्लंघन करके नहीं ।

५—प्रियं ब्रूयात् अकृपणः ।

प्रिय वचन बोलना चाहिये, पर दीनता प्रकट करते हुए नहीं ।

१—१ से ३६ तक की शिक्षायें महाभारत के शान्ति पर्व के ७० वें अध्याय से संकलित हैं । इनमें ३६ विशेषताओं के साथ ३६ शिक्षायें दी गई हैं । नीतिज्ञों के ये ३६ गुण कहे गये हैं ।

६—शूरः स्यात् अविकत्थनः।

शूर-वीर होना चाहिये, पर बढ़-बढ़कर बातें या अपने मुँह से अपनी प्रशंसा नहीं करनी चाहिये।

७—दाता नाऽपात्रवर्षी स्यात्।

दान देना चाहिये, पर जो लोग दान के पात्र न हों उन्हें नहीं।

८—प्रगल्भः स्यात् अनिष्ठुरः।

प्रगल्भ होना चाहिये पर उसमें निष्ठुरता नहीं आने देनी चाहिये।

९—संदधीत न चाऽनार्यैः।

लोगों के साथ प्रेम-सम्बन्ध रखना चाहिये, पर दुष्ट लोगों के साथ नहीं।

१०—विगृह्णीयात् न बन्धुभिः।

आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार लड़ाई-झगड़ा भी करना चाहिये, पर अपने बन्धुओं के साथ नहीं।

११—नाऽभक्तं चारयेत् चारम्।

दूत से काम लेना चाहिये, पर जो दूत राजभक्त और ईमानदार न हो उससे नहीं।

१२—कुर्यात् कार्यम् अपीडया।

अपना काम करना चाहिये, पर दूसरों को कष्ट पहुँचा कर नहीं।

१३—अर्थं ब्रूयात् न चासत्सु।

अपनी बातें दूसरों से कहनी चाहिये, पर असज्जन लोगों से नहीं।

१४–गुणान् ब्रूयात् न चात्मनः।

गुणों का वर्णन करना चाहिये पर अपने गुणों का नहीं।

१५–आदद्यात् न च साधुभ्यः।

आवश्यकतानुसार दूसरो का धन लेना चाहिये, पर साधु पुरुषों का नही।

१६–नाऽसत्पुरुषमाश्रयेत्।

अपनी आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार दूसरे लोगों का सहारा लेना चाहिये, पर नीच पुरुषों का नहीं।

१७–नाऽपरीक्ष्य नयेद् दण्डम्।

दुष्टों को दण्ड देना चाहिये, पर अपराध की ठीक-ठीक जांच किये बिना नहीं।

१८–न च मन्त्रं प्रकाशयेत्।

और-और बातें दूसरों से भी कहनी चाहिये, पर गुप्त मन्त्रणा को कहीं प्रकाशित नहीं करना चाहिये।

१९–विसृजेत् न च लुब्धेभ्यः।

दूसरों को दान देना चाहिये, पर लोभियों को नहीं।

२०–विश्वसेत् नाऽपकारिषु।

दूसरों का विश्वास करना चाहिये पर अपकारियों पर नहीं।

२१—अनीर्षुः गुप्तदारः स्यात् ।

ईर्ष्या न रखते हुए स्त्रियों को सुरक्षित रखना चाहिये ।

२२—चोक्षः स्यात् अघृणी नृपः ।

शुद्ध और पवित्र रहना चाहिये पर किसी से घृणा नहीं करनी चाहिये ।

२३—स्त्रियः सेवेत नाऽत्यर्थम् ।

स्त्री के साथ सम्बन्ध रखना चाहिये, पर अधिक मात्रा में नहीं ।

२४—मृष्टं भुञ्जीत नाऽहितम् ।

स्वादिष्ट वस्तु खानी चाहिये, पर स्वादिष्ट होने पर भी जो अहितकर हो उसे नहीं खाना चाहिये ।

२५—अस्तब्धः पूजयेत् मान्यान् ।

माननीय पुरुषों का आदर-सत्कार करना चाहिये, पर उद्दण्डता और असभ्यता के साथ नहीं ।

२६—गुरून् सेवेत् अमायया ।

गुरुजनों की सेवा करनी चाहिये, पर छल-कपट के साथ नहीं ।

२७—अर्चेद् देवान् अदम्भेन ।

देवताओं की पूजा-अर्चा करनी चाहिये, पर लोगों को दिखाने और धोखा देने के लिए नहीं ।

२८—क्रियामिच्छेत् अकुत्सिताम् ।

काम करना चाहिये, पर निन्दनीय काम नहीं ।

२९–सेवेत प्रणयं हित्वा ।

बड़ों की सेवा करनी चाहिये, पर केवल दिखाने के लिए नहीं प्रत्युत स्नेहपूर्वक सेवा करनी चाहिये ।

३०–दक्षः स्यात् न त्वकालवित् ।

कार्य करने में कुशल होना चाहिये, पर उसके साथ अवसर पर भी ध्यान रखना चाहिये ।

३१–सान्त्वयेत् न च मोक्षाय ।

दूसरों को मधुर बातों से समझाना-बुझाना चाहिये, पर केवल अपनी जान बचाने और गला छुड़ाने के लिए नहीं ।

३२–अनुगृह्यात् न चाऽक्षिपेत् ।

जो अनुग्रह के पात्र हों उन पर अनुग्रह करना चाहिये, पर अनुग्रह करते समय उनपर आक्षेप नहीं करना चाहिये ।

३३–प्रहरेत् न त्वविज्ञाय।

अपराधियों को मारना चाहिये पर अपराध को बिना जाने-बूझे नहीं ।

३४–हत्वा शत्रून् न शोचयेत् ।

शत्रुओं को मारना चाहिये, पर मारकर उसके लिए शोक नहीं करना चाहिए ।

३५–क्रोधं कुर्यात् न चाऽकस्मात् ।

परिस्थिति के अनुसार क्रोध करना चाहिए पर, बिना कारण क्रोध नहीं करना चाहिए ।

३६–मृदुः स्मान्नापकारिषु ।

कोमल स्वभाव का होना चाहिए, पर अपकारियों के साथ कोमल व्यवहार नहीं करना चाहिए।

३७–अलुब्धं बुद्धिसम्पन्नं सर्वकर्मसु योजयेत् । ७१-८

किसी भी काम में ऐसे ही पुरुष को नियुक्त करना चाहिये जो बुद्धिसम्पन्न हो और लोभी न हो, क्यों कि लोभी होने पर वह अपना ही स्वार्थ साधन करने लगेगा।

३८–अप्रियं यस्य कुर्वीत भूयस्तस्य प्रियं चरेत् ।

९३-८

जिसके साथ कार्य-कारणवश कोई अप्रिय आचरण हो जाय उसके साथ पुनः प्रिय आचरण भी करना चाहिये। ऐसा करने में संकोच का अनुभव नहीं करना चाहिये।

३९–कुर्यात् प्रियमयाचितः । ९३-८

विना कहे या अनुरोध किये ही दूसरे का हित-साधन करना चाहिये। यदि अपने से दूसरे का कोई प्रिय कार्य हो सकता हो तो उसे बिना उसके कहे भी कर देना चाहिये।

४०–अपकृत्य बलस्थस्य दूरस्थोऽस्मीति नाऽश्वसेत् ।

९३-८

३७-५०—'शान्तिपर्व' से संकलित। अध्याय और श्लोक-संख्या श्लोकों के सामने लिखित हैं।

किसी बलवान् व्यक्ति का अपकार कर केवल दूर रहने से ही निश्चिन्त नहीं रहना चाहिये, क्योंकि बलवान् व्यक्ति दूर से भी अपने अपकारी से अपकार का बदला ले सकता है।

४१--न जातु कलहेनेच्छेत् नियन्तुमपकारिणः १०३-७

अपने अपकारियों को केवल लड़ाई-झगड़े से ही पराजित करने या काबू में लाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये प्रत्युत यथासम्भव शान्तिपूर्वक वार्तालाप से भी कार्य-साधन करने का प्रयत्न करना चाहिये।

४२--प्रियमेव चरेन्नित्यं नाप्रियं किञ्चिदाचरेत् । १०३-९

हमेशा ऐसा ही कार्य करना चाहिये जो लोगों को प्रिय मालूम पड़े। किसी को भी अप्रिय लगने वाली बात कभी नहीं करनी चाहिये।

४३--विरमेत् शुष्कवैरेभ्यः कण्ठायासांश्च वर्जयेत् । १०३-१०

किसी के साथ बिना मतलब के वैर-विरोध नहीं करना चाहिये और बेकार इतना बोलना भी नहीं चाहिये जिससे गले को तकलीफ मालूम पडे।

४४--यद् यद् ब्रूयादल्पमतिः तत्तदस्य सहेद् बुधः । ११४-७

अज्ञानी और अल्पबुद्धि आदमी जो कुछ उचित या अनुचित कहे उसे बुद्धिमान् व्यक्तियों को सह लेना चाहिये।

४५--वैरं न कुर्वीत नरो दुर्बुद्धिबुद्धिजीविना। १५५-११

जिसकी बुद्धि अच्छी न हो उसे बुद्धिमान् व्यक्ति से वैर-विरोध नहीं करना चाहिये ।

४६--तीक्ष्णकाले भवेत्तीक्ष्णो मृदुकाले मृदुर्भवेत् ।
१४०-६५

मनुष्य को जहाँ गर्म होनेकी आवश्यकता हो वहाँ गर्म होना चाहिए और जहाँ नरम होने की आवश्यकता हो वहाँ नरम होना चाहिए। हमेशा न तो नरम ही रहना चाहिए और न गरम ही रहना चाहिए।

४७--न तत् तरेत् यस्य न पारमुत्तरेत् । १४०-६९

उस नदी या तालाव में नहीं तैरना चाहिए जिसका पार न लगा सके ।

४८--न तद्धरेत् यत् पुनराहरेत् परः । (,,)

किसी की कोई ऐसी वस्तु नहीं लेनी चाहिए जिसे पुनः दूसरा कोई ले ले ।

४९--न तत् खनेत् यस्य न मूलमुद्धरेत् (,,)

उस चीज को नहीं खनना चाहिए जिसका जड़ न उखाड़ सके ।

५०--न तं हन्यात् यस्य शिरो न पालयेत् । (,,)

ऐसे व्यक्ति को नही मारना चाहिए जिसे मारकर उसे छिपाना पड़े। (ये चारों पंक्तियाँ एक ही श्लोक की हैं। इन शिक्षाओं का तात्पर्य यह है कि मनुष्य को किसी भी ऐसे काम में हाथ नहीं डालना चाहिए जिसे वह पूरा न कर सके)।

—:०:—

४—आचार्य कौटिल्य प्रणीत "चाणक्य-सूत्राणि" से संकलित शिक्षायें

१—अविनीतं स्नेहमात्रेण न मन्त्रे कुर्वीत।

किसी अविनीत व्यक्ति को केवल स्नेह के कारण मन्त्रणामें सम्मिलित नहीं करना चाहिए।

२—सर्वद्वारेभ्यो मन्त्रो रक्षितव्यः।

गुप्त मन्त्रोंकी सब प्रकारसे रक्षा करनी चाहिए।

३—मन्त्रकाले न मत्सरः कर्तव्यः।

मन्त्रणाके समय मात्सर्य नहीं करना चाहिए।

४—त्रयाणाम् एकवाक्ये संप्रत्ययः।

जिस बातपर तीन व्यक्ति एकमत हो जायँ उसे माननीय समझना चाहिए।

५—हीयमानः सन्धि कुर्वीत।

जब अपनी शक्ति कम हो जाय तो शत्रुसे सन्धि कर लेनी चाहिए।

६—अरिप्रयत्नम् अभिसमीक्षेत।

आत्मरक्षाकी दृष्टिसे शत्रुके सब प्रयत्नों पर सदा सतर्क दृष्टि रखनी चाहिए।

७—अमित्रविरोधात् आत्मरक्षामावसेत्।

जब शत्रुके साथ विरोध ठन जाय तो अपनी रक्षा पर पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

८—शक्तिहीनो बलवन्तमाश्रयेत्।

जब अपनी शक्ति क्षीण हो जाय तो किसी बलवान व्यक्ति का सहारा लेना चाहिए।

९—उद्धतवेषधरो न भवेत्।

उद्धत बेष नहीं धारण करना चाहिए।

१०—न देवचरितं चरेत्।

देवताओं के चरित्र का अनुकरण नहीं करना चाहिये।

११—पूर्वं निश्चित्य पश्चात् कार्यमारभेत।

किसी भी कार्य के सम्बन्ध में पहले सब प्रकार का निश्चय कर पीछे उस कार्य का आरंभ करना चाहिए।

१२—कार्यान्तरे दीर्घसूत्रता न कर्तव्या।

किसी भी काम को करते समय उसमें दीर्घसूत्रता नहीं करनी चाहिए।

१३— दुरनुबन्धं कार्यं न आरभेत।

जो काम परिणाम में दुःखकर तथा अहितकर हो उसे नहीं करना चाहिए।

१४— कालवित् कार्यं साधयेत्।

समयकी अनुकूलता तथा प्रतिकूलता का ज्ञान रखते हुए कार्य-साधन करना चाहिए।

१५—क्षणं प्रति कालविक्षेपं न कुर्यात् सर्वकृत्येषु ।

किसी भी काम में एक क्षण भी बेकार नहीं बिताना चाहिये ।

१६—देशकाल-विभागं ज्ञात्वा कार्यम् आरभेत ।

देश और काल की गति को ठीक-ठीक समझ कर किसी कार्यका आरंभ करना चाहिये ।

१७—नीतिज्ञो देशकालौ परीक्षेत ।

नीतिज्ञ पुरुष को देश और काल की गति-विधि पर सदा ध्यान रखना चाहिये और उसकी परीक्षा करते रहना चाहिये ।

१८—सर्वाश्च संपदः सर्वोपायेन परिग्रहेत् ।

सभी उचित उपायोंसे सब प्रकारकी धन-सम्पत्ति का उपार्जन तथा संग्रह करना चाहिये ।

१९—ज्ञानाऽनुमानैश्च परीक्षा कर्तव्या ।

किसी वस्तु को प्रत्यक्ष तथा अनुमान दोनों प्रकारसे परीक्षा करनी चाहिये ।

२०—यो यस्मिन् कर्मणि कुशलः तं तस्मिन्नेव नियोजयेत् ।

जो व्यक्ति जिस कामको करने में कुशल हो उसे उसी काममें लगाना चाहिये ।

२१—अज्ञानिना कृतमपि न बहु मन्तव्यम् ।

यदि किसी अज्ञानी मनुष्य से संयोगवश कोई काम

एक बार अच्छा भी हो जाय तो इतने ही से उसे बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिये।

२२—सिद्धस्यैव कार्यस्य प्रकाशनं कर्तव्यम्।

कोई भी काम जब सिद्ध और सफल हो जाय तभी उसको प्रकट करना चाहिये।

२३—दैवं शान्तिकर्मणा प्रतिषेद्धव्यम्।

यदि कार्य में कोई दैवी बाधा आ पड़े तो उसे शान्त-कर्म से अर्थात् पूजा-पाठ तथा जप-यज्ञ आदि से शान्ति करना चाहिये।

२४—मानुषीं कार्यविपत्तिं कौशलेन विनिवारयेत्।

यदि कार्यमें किसी मनुष्यके द्वारा कोई बाधा की जा रही हो तो उसे अपनी बुद्धिमानी से दूर करना चाहिये।

२५—कार्यार्थिना दाक्षिण्यं न कर्तव्यम्।

जो मनुष्य अपना कार्य सिद्ध करना चाहते हों उन्हे बहुत सरलता और सिधाई नहीं रखनी चाहिये। बहुत सिधाई से भी अनेक काम बिगड़ जाते हैं।

२६—प्रत्यक्ष-परोक्षाऽनुमानैः कार्याणि परीक्षेत।

आँखोंसे प्रत्यक्ष देखकर, दूसरों के मुँहसे पहले के कामों को सुनकर तथा अनुमान के द्वारा कार्योंके संबन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चहिये तथा उनकी अच्छाई-बुराई की परीक्षा करनी चाहिये।

२७—स्वशक्तिं ज्ञात्वा कार्यम् आरभेत ।

अपनी शक्तिका अन्दाजा लगाकर कोई कार्य आरंभ करना चाहिये ।

२८—स्वामिनः शीलं ज्ञात्वा कार्यार्थी कार्यं साधयेत् ।

कार्यार्थी पुरुषको स्वामी का शील-स्वभाव समझकर अपना कार्यसाधन करना चाहिये। अभिप्राय यह है कि जिसके अधीन अपना काम हो उसका शील-स्वभाव समझ कर उसके अनुसार ही उसके साथ व्यवहार करना चाहिये और अपना काम सिद्ध करना चाहिये ।

२९—क्षुद्रे गुह्य-प्रकाशनम् आत्मवान् न कुर्यात् ।

बुद्धिमान् पुरुष को अपनी गुप्त बातों को क्षुद्र लोगों के सामने नहीं प्रकट करना चाहिये ।

३०—महात्मना परेण साहसं न कर्तव्यम् ।

किसी महान् पुरुष के साथ कोई साहसपूर्ण कार्य नहीं करना चाहिये ।

३१—कदाचिदपि चारित्रं न लङ्घयेत् ।

कभी भी सच्चरित्रता का उल्लंघन नहीं करना चाहिये ।

३२—प्राणादपि प्रत्ययो रक्षितव्यः ।

प्राण देकर भी अपने प्रति जनता के हृदय में विश्वास को बनाये रखना चाहिये। अपनी विश्वसनीयता को किसी प्रकार नहीं खोना चाहिये ।

३३—बालादपि अर्थजातं शृणुयात् ।

बालकों से भी अच्छी बातें सुननी चाहिये।

३४—सत्यमपि अश्रद्धेयं न वदेत् ।

ऐसा सत्य भी नहीं बोलना चाहिये जिस पर किसी की श्रद्धा न हो सके।

३५—न अल्पदोषात् बहुगुणाः त्यज्यन्ते ।

जिन लोगों में बहुत गुण हों उन्हें थोड़े से दोष के कारण नहीं छोड़ना चाहिये।

३६—मर्यादातीतं कदाचिदपि न विश्वसेत् ।

जो बातें सर्वथा मर्यादा के बाहर हों उन पर विश्वास नहीं करना चाहिए।

३७—सतां मतं न अतिक्रामेत् ।

सत्पुरुषों की सम्मति का अतिक्रमण नहीं करना चाहिये।

३८—अविश्वस्तेषु विश्वासो न कर्त्तव्यः ।

अविश्वासियों के साथ विश्वास नहीं करना चाहिये।

३९—अर्थसमादाने वैरिणां सङ्ग एव न कर्तव्यः ।

रुपये-पैसे के काम में अपने वैरियों और विरोधियों का साथ नहीं करना चाहिये। क्यों कि इससे हानि होने की सम्भावना रहती है।

४०—अर्थसिद्धौ वैरिणं न विश्वसेत् ।

आर्थिक मामलों में वैरियों और विरोधियों का विश्वास नहीं करना चाहिये ।

४१—शत्रोरपि सुतः सखा रक्षितव्यः ।

शत्रु का भी पुत्र यदि वस्तुतः मित्र हो जाय तो उसकी रक्षा करनी चाहिये ।

४२—आत्मच्छिद्रं न प्रकाशयेत् ।

अपनी गुप्त बातों, त्रुटियों और कमजोरियों को सबके सामने और विशेषकर अपने विपक्षो के सामने प्रकट नहीं करना चाहिये ।

४३—हस्तगतमपि शत्रुं न विश्वसेत् ।

शत्रु हाथ में आ जाय तब भी उसका विश्वास नहीं करना चाहिये ।

४४—स्वजनस्य दुर्वृत्तं निवारयेत् ।

अपने आन्तरिक लोगों में जो बुराइयाँ हों उन्हें दूर करते रहना चाहिये ।

४५—नीचस्य मतिः न दातव्या ।

नीच मनुष्य को बुद्धि नहीं देनी चाहिये ।

४६—तेषु विश्वासो न कर्तव्यः ।

नीच पुरुषों का विश्वास भी नहीं करना चाहिये ।

४७—कदापि पुरुषं नाऽवमन्येत ।

कभी भी किसी व्यक्ति का अपमान और अनादर नहीं करना चाहिये।

४८—क्षन्तव्यमिति पुरुषं न बाधेत।

कोई अपराध हो जाने पर उसे क्षमा करने के लिए किसी व्यक्ति को विशेष बाध्य नहीं करना चाहिये।

४९—न दुर्जनैः सह संसर्गः कर्तव्यः।

दुर्जन और दुष्ट लोगों का साथ एवं सहवास नहीं करना चाहिये।

५०—कार्यबहुत्वे बहुफलम् आयतिकं कुर्वीत।

जब सामने एक ही बार कई काम आ पड़ें तो उनमें जो अधिक लाभकारी और भविष्य के लिये हितकर हो वही काम करना चाहिये।

५१—स्वयमेव अवस्कन्नं कार्यं निरीक्षेत।

जो काम बिगड़ गया हो या बिगड़ रहा हो उसे दूसरे लोगों पर न छोड़कर स्वयं देखना और सँभालना चाहिये।

५२—मूर्खेषु विवादो न कर्तव्यः।

मूर्खों के साथ विवाद नहीं करना चाहिये।

५३—मूर्खेषु मूर्खवत् कथयेत्।

मूर्खों के साथ मूर्खों की ही तरह बातें करनी चाहिये।

५४—पररहस्यं नैव श्रोतव्यम्।

दूसरों की गुप्त बातों को नहीं सुनना चाहिए।

५५—स्वजनेषु अतिक्रमो न कर्तव्यः ।

अपने भाई-बन्धुओं के साथ अनादर का व्यवहार नहीं करना चाहिए ।

५६—अप्रतीकारेषु अनादरो न कर्तव्यः ।

जिस काम का करना सर्वथा आवश्यक हो उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए ।

५७—नास्ति चोरेषु विश्वासः ।

चोरों का विश्वास नहीं करना चाहिए ।

५८—अमरवत् अर्थजातम् अर्जयेत् ।

अपने को अजर और अमर समझकर धन-सम्पत्ति का संग्रह और सम्पादन करना चाहिए । जीवन को क्षणिक या विनाशी समझकर ऐहिक उन्नति के प्रति उदासीनता नहीं रखनी चाहिए ।

५९—परविभवेषु आदरो न कर्तव्यः ।

दूसरे की सम्पति के प्रति इस प्रकार का आदरभाव नहीं प्रगट करना चाहिये जिससे किसी प्रकार का लोभ प्रतीत हो ।

६०—पलालमपि परद्रव्यं न हर्तव्यम् ।

दूसरे का तृणमात्र धन भीं नही चुराना चाहिए ।

६१—संसदि शत्रुं न परिक्रोशेत् ।

सभा में शत्रु की निन्दा नहीं करनीं चाहिए ।

६२—म्लेच्छानामपि सुवृत्तं ग्राह्यम् ।

म्लेच्छ लोगों में भी जो अच्छे आचरण हों उन्हें ग्रहण करना चाहिए और उसके अनुसार चलना चाहिए ।

६३—गुणे न मत्सरः कर्तव्यः ।

गुण के साथ मात्सर्य नही करना चाहिए । अर्थात् किसी भी गुण को दोष की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए ।

६४—शत्रोरपि सुगुणो ग्राह्यः ।

शत्रु के भी सद्‌गुणों का ग्रहण करना चाहिए । इसमें अपनी निन्दा या अपमान नही समझना चाहिए ।

६५—विषादपि अमृतं ग्राह्यम् ।

विष में भी यदि अमृत हों तो उसे निकाल कर उसका ग्रहण और उपभोग करना चाहिए ।

६६—अपराधानुरूपो दण्डः ।

जैसा अपराध हो उसके अनुरूप ही दण्ड देना चाहिए ।

६७—कथानुरूपं प्रतिवचनम् ।

जैसा प्रसंग हो उसके अनुसार ही उत्तर देना चाहिए ।

६८—विभवानुरूपम् आभरणम् ।

अपनी जैसी आर्थिक स्थिति हो उसके अनुरूप ही वेष-भूषा तथा अलंकार आदि धारण करना चाहिए ।

६९–कुलानुरूपं वृत्तम् ।

अपने कुल के अनुरूप ही व्यवहार और चाल-चलन रखना चाहिये ।

७०—कार्यानुरूपः प्रयत्नः ।

कार्य के अनुरूप ही उसके लिए प्रयत्न करना चाहिए ।

७१–पात्रानुरूपं दानम् ।

जैसा पात्र हो उसके अनुसार ही दान देना चाहिए ।

७२–वयोऽनुरूपो वेषः ।

जैसी अवस्था हो उसके अनुरूप ही वेष धारण करना चाहिए ।

७३–स्वाम्यनुकूलो भृत्यः ।

सेवक को स्वामी के अनुकूल रहना चाहिए ।

७४–गुरुवशानुवर्ती शिष्यः ।

शिष्य को गुरुजनों के अधीन रहना चाहिए ।

७५—पितृवशानुवर्ती पुत्रः ।

पुत्र को पिता के अधीन रहना चाहिए ।

७६—अत्युपचारः शङ्कितव्यः ।

यदि कोई परिचित या अपरिचित व्यक्ति मात्रा से अधिक उपचार करे तो उसमें कोई विशेष मतलब समझ कर उससे सतर्क रहना चाहिये ।

७७–स्वामिनि कुपिते स्वामिनमेव अनुवर्तेत ।

अपने मालिक या अपने अफसर के कुपित हो जाने पर उन्ही से अनुनय-विनय करना चाहिये ।

७८–मातृताडितो वत्सो मातरमेव अनुरोदिति ।

माता के मारने पर भी बच्चा माताके ही पास जाता है ।

७९–मतिमत्सु मूर्खमित्रगुरुवल्लभेषु विवादो न कर्तव्यः

विद्वानों तथा मूर्ख, मित्र, गुरु, एवं प्रियजनों के साथ विवाद नहीं करना चाहिये ।

८०–अनुपद्रवं देशम् आवसेत् ।

ऐसे देश अथवा स्थान पर रहना चाहिए जहाँ कोई उपद्रव न हो ।

८१—कुटुम्बिनो भेतव्यम् ।

जिन लोगों के पास अधिक परिवार हो उनसे डर कर रहना चाहिए ।

८२–राजपुरुषैः सम्बन्धं कुर्यात् ।

राज-कर्मचारियों के साथ सम्बन्ध रखना चाहिये ।

८३—कथञ्चिदपि धर्मं निषेवेत ।

जिस किसी प्रकार भी धर्म का पालन करना चाहिये । अपने कर्म तथा कर्तव्य के पालन में किसी प्रकार भी शिथिलता या आलस्य नहीं करना चाहिये ।

८४–प्रियमपि अहितं न वक्तव्यम् ।

प्रिय वचन भी यदि अहितकर हो तो उसे नहीं कहना चाहिये।

८५—बहुजन-विरुद्धमेकं न अनुवर्तेत।

किसी भी ऐसे एक व्यक्ति का अनुगामी नहीं बनना चाहिए जिसके बहुत लोग विरोधी हों।

८६—न दुर्जनेषु भागधेयः कर्तव्यः।

दुर्जनों के साथ साझेदारी का कोई काम नहीं करना चाहिये। क्योंकि ऐसा करने से पग-पगपर काम में बाधा पड़ती है और उद्योग सफल नही होता।

८७—अर्थिषु अवज्ञा न कार्या।

प्रार्थियों की अवहेलना नहीं करनी चाहिये। जो कोई व्यक्ति किसी काम के लिये आये उसके साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करना चाहिये और यथासम्भव उसका काम कर देना चाहिये।

८८—राजद्विष्टं न च कर्तव्यम्।

जो काम शासन के विरुद्ध हो वह नहीं करना चाहिये।

८९—न च आगतं सुखं त्यजेत्।

जो कोई सुख का साधन या सामग्री सुविधा और न्याय से मिल जाय उसका परित्याग नहीं करना चाहिये।

९०—रात्रिचारणं न कुर्यात्।

रात में घूमने का अभ्यास नहीं रखना चाहिये।

९१—परगृहम् अकारणतो न प्रविशेत् ।

बिना कारण के दूसरे के घर में या हाते में प्रवेश नहीं करना चाहिये ।

९२—यम् अनुजीवेत् तं नाऽपवदेत् ।

जिसके सहारे अपनी जीविका चलता हो उसकी निन्दा नहीं करनी चाहिये ।

९३—अनार्यसम्बन्धात् वरम् आर्यशत्रुता ।

सज्जन पुरुषों से शत्रुता अच्छी पर दुर्जनों से सम्बन्ध रखना अच्छा नहीं ।

९४—परायत्तेषु उत्कण्ठां न कुर्यात् ।

जो काम सर्वथा दूसरों के अधीन हो उसके लिये बहुत उत्कण्ठा नहीं रखनी चाहिये ।

९५—आत्मा न स्तोतव्यः ।

अपनी प्रशंसा नहीं करनी चाहिये ।

९६—दैवायत्तं न शोचेत् ।

जो बात केवल दैव के अधीन हो उसके लिये चिन्ता और शोक नहीं करना चाहिये ।

९७—पुत्रो न स्तोतव्यः ।

पुत्र की विशेष प्रशंसा नहीं करनी चाहिये ।

९८—स्वामी स्तोतव्यः अनुजीविभिः ।

अनुजीवियों को अपने मालिक की प्रशंसा करनी चाहिये ।

९९--धर्मकृत्येष्वपि स्वामिन एव घोषयेत्।

यदि अपने घर कोई विशेष धर्म-कार्य यज्ञ आदि हो तो उसे भी अपने मालिक की ही कृपा का फल बतलाना चाहिये।

१००--राजाज्ञां न अतिलंघयेत्।

राजाज्ञा का—सरकारी आदेश का—उल्लंघन नहीं करना चाहिये।

१०१--आपदर्थं धनं रक्षेत्।

आपत्ति के समय के लिए कुछ धन बचाये रहना चाहिये।

१०२--श्वः कार्यम् अद्य कुर्वीत।

जो काम कल करना हो उसे भरसक आज ही कर लेना चाहिये।

१०३--आपराह्विकं पूर्वाह्न एव कर्त्तव्यम्।

जो काम अपराह्न में करना हो उसे पूर्वाह्न में ही कर लेना चाहिये। इन दोनों सूत्रों का तात्पर्य यह है कि किसी अच्छे काम के लिए आज-कल नहीं करना चाहिए। उसे यथासम्भव शीघ्र ही कर लेना चाहिये।

१०४--चौर-राजपुरुषेभ्यो वित्तं रक्षेत्।

चोरों से और सरकारी कर्मचारियों से अपने धन को बचाये रहना चाहिये।

—:०:—

५—सोमदेव प्रणीत "नीतिवाक्यामृतम्" से संकलित शिक्षायें

१—आकाशे प्रतिशब्दवति च आश्रये मन्त्रं न कुर्यात् ।
१०-२६

खुले मैदान में तथा जहां से प्रतिध्वनि निकलती हो उस स्थान पर मन्त्रणा नहीं करनी चाहिये।

२—आ कार्यसिद्धेः रक्षितव्यो मन्त्रः । १०-२८

जब तक कार्य सिद्ध न हो जाय तब तक सलाह को प्रगट नहीं करना चाहिये।

३—न तैः सह मन्त्रं कुर्यात् येषां पक्षीयेषु अपकुर्यात् ।
१०-३१

ऐसे लोगों के साथ कोई मन्त्रणा नहीं करनी चाहिये जिनके मित्र-वर्ग का किसी प्रकार का कोई अपकार करना हो या उनके साथ किसी प्रकार का वैर-विरोध हो।

४—अनायुक्तो मन्त्रकाले न तिष्ठेत् । १०-३२

जहां लोग किसी प्रकार की मन्त्रणा अथवा गुप्त विचार करते हों वहां विना कहे नहीं ठहरना चाहिये।

५—उद्धृतमन्त्रो न दीर्घसूत्रः स्यात् । १०-४२

सलाह या विचार-विमर्श कर लेने के बाद उस काम के करने में विलम्ब नहीं करना चाहिये।

६—मन्त्रकाले विगृह्य विवादः स्वैरालापश्च न कर्तव्यः
१०—४९

किसी विषय पर विचार-विमर्श तथा मन्त्रणा करते समय लड़-झगड़ कर बातें तथा मनमानी बातें नहीं करनी चाहिये।

७—कमपि आत्मनः अनुकूलं प्रतिकूलं न कुर्यात्।
१-९४५

किसी भी अपने अनुकूल व्यक्ति को प्रतिकूल नहीं होने देना चाहिये। यथासंभव अपना ऐसा व्यवहार रखना चाहिये जिससे कि अपने पूर्व परिचित, प्रेमी तथा अनुकूल व्यक्ति प्रतिकूल और विरोधी न होने पावें।

८—युक्तमुक्तं वचो बालादपि गृह्णीयात्। १०-१५४

यदि बालक भी कोई युक्तियुक्त बात कहे तो उसे मान लेना चाहिये। बालक समझकर उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

९—अपराध्यैरपराधकैश्च सह गोष्ठीं न कुर्यात्।
१०-१६

अपराधी और अपराध लगाने वालों के साथ सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये। क्योंकि ऐसे लोगों के साथ सम्बन्ध रखने से अपने ऊपर भी दोष लगने का भय रहता है।

१०–न कस्यापि क्रुद्धस्य पुरतः तिष्ठेत् ।

किसी भी क्रुद्ध मनुष्य के आगे खड़ा नहीं होना चाहिये। क्योंकि क्रोध के कारण मनुष्य अन्धा हो जाता है और वैसी अवस्था में वह किसी के भी साथ दुर्व्यवहार कर सकता है।

११–गृहदौःस्थित्यम् आगन्तुकानां पुरतो न प्रकाशयेत् । ११-३०

अपने यहाँ जो कोई अतिथि या आगन्तुक आवें, उनके सामने अपने घर की दुरवस्था को प्रकाशित नहीं करना चाहिये।

१२–महति अपराधेऽपि न दूतमुपहन्यात् । १३-१७

बहुत बड़ा अपराध हो जाने पर भी दूत तथा सन्देश-वाहक व्यक्ति को नहीं मारना चाहिये।

१३–न अविचार्य किमपि कार्यं कुर्यात् । १५-१

विना विचारे कोई काम नहीं करना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से काम भी सिद्ध नहीं होता और अपनी मूर्खता भी सिद्ध होती है।

१४–हर्षामर्षाभ्याम् अकारणं तृणांकुरमपि न उपहन्यात् किं पुनर्मनुष्यम् ।

हर्ष और क्रोध के आवेश में आकर बिना कारण किसी तृण को भी तकलीफ नहीं पहुँचानी चाहिये फिर मनुष्य की तो बात ही क्या ?

१५—आज्ञाभंगकारिणं सुतमपि न सहेत।

यदि अपना पुत्र भी आज्ञा का उल्लंघन करता हो तो उसे सहन नहीं करना चाहिये।

१६—परमर्मस्पर्शकरम् अश्रद्धेयम् असत्यम् अतिमात्रं च न भाषेत। १७-३०

दूसरे के मर्म पर आघात पहुँचाने वाली, अविश्वसनीय, असत्य तथा अधिक मात्रा में बातें नहीं बोलनी चाहिये। मनुष्य की योग्यता की पहचान तथा उसका हित और अहित बहुधा उसकी वाणी पर ही अवलम्बित होता है। अतः खूब समझ-बूझ कर कोई बात कहनी चाहिये।

१७—वेषम् आचारं वा अनभिज्ञातं न भजेत्। १७-३१

जो वेषभूषा तथा आचार-व्यवहार अपने यहाँ के लिये अज्ञात एवं अपरिचित हो उसका व्यवहार नहीं करना चाहिये।

१८—अर्थिनाम् उपायनम् अप्रतिकुर्वाणो न गृह्णीयात्। १७-५५

किसी प्रार्थी का बिना काम पूरा किये उससे भेंट आदि नहीं लेनी चाहिये।

१९—आगन्तुकैः असहनैश्च सह नर्म न कुर्यात्। १७-५६

जो लोग आगन्तुक हों तथा जो लोग हँसी-परिहास पसन्द न करते हों उनके साथ हँसी-परिहास नहीं करना चाहिए। परिचित तथा परिहासप्रेमी लोगों के साथ ही हँसी-परिहास करना चाहिये।

२०—पूज्यैः सह न अधिरुह्य वदेत्। १७-५७

पूज्य और आदरणीय पुरुषों के साथ बढ़-बढ़कर बातें नहीं करनी चाहिये।

२१—भृत्यम् अशक्य-प्रयोजनं च जनं न आशया क्लेशयेत्। १७-५८

जिनका भरण-पोषण अपने अधीन हो, तथा जिन लोगों का काम अपने से पूरा होने लायक न हो उन्हें वृथा आशा देकर हैरान नहीं करना चाहिये।

२२—अनिवेद्य भर्तुः न कश्चिदारम्भं कुर्यात् अन्यत्र आपत्-प्रतीकारेभ्यः। १८-६२

सेवकों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों को अपने से बड़े अफसरों से बिना पूछे कोई काम आरम्भ नहीं करना चाहिये। परन्तु किसी आपत्ति के आ पड़ने पर उसका प्रतीकार बिना पूछे भी करना चाहिये।

२३—अनवं नवेन वर्धयितव्यं च। १८-७०

संचित धन को नव-उपार्जित धन से बढ़ाते हुए उसमें से खर्च करना चाहिये। अभिप्राय यह है कि मूलधन को सर्वथा निःशेष नहीं करना चाहिये।

२४—अनधिकृतः अनभिमतश्च न राजसभां प्रविशेत् । २५-७४

बिना अधिकार मिले तथा बिना सम्मति लिये राज-सभा में प्रवेश नहीं करनाँ चाहिये। सरकारी सभा-समितियों में उन्हीं लोगों को जाना चाहिये जिन्हें पहले से अधिकार प्राप्त हो या जिन्होंने किसी उत्तरदायी कर्मचारी से सम्मति प्राप्त कर ली हो।

२५—कुहकाभिचार-कार्मण-कारिभिः सह न संगच्छेत् । २५-७७

जादू-टोना तथा तन्त्र-मन्त्र आदि जानने वालों के साथ विशेष सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये।

२६—प्राण्युपघातेन कामक्रीडां न प्रवर्तयेत् । २५-७६

इस प्रकार का मनोविनोद या क्रीडा-कौतुक नहीं करना चा हये जिससे किसी को किसी प्रकार का कष्ट पहुँचता हो।

२७—न अतिक्रुद्धोऽपि मान्यमतिक्रामेत् अवमन्येत वा । २५-८०

अत्यन्त क्रोध होने पर भी अपने मान्य व्यक्तियों की आज्ञा का उल्लंघन तथा उनका अपमान नहीं करना चाहिये।

२८—शत्रुणाऽपि सूक्तमुक्तं न दूषयितव्यम् । २६-१३

यदि अपना शत्रु और विरोधी व्यक्ति भी कोई अच्छी बात कहे तो उसे बुरा न मान कर उसका सम्मान करना चाहिये ।

२९—अपराधाऽनुरूपः दण्डः पुत्रेऽपि प्रयोक्तव्यः । २६-४२

अपराध के अनुसार पुत्र को भी दण्ड देना चाहिये । क्योंकि अधिक लाड़-प्यार करने के कारण जो लोग अपने लड़कों को अपराध करने पर भी उचित दण्ड नहीं देते उनके लड़के आगे चलकर उद्दण्ड हो जाते हैं और उसका कुफल फिर माता-पिता को भी भोगना पड़ता है ।

३०—भर्तुरादेशं न विकल्पयेत् । २४-६१

अपने मालिक या अफसर की आज्ञा का पालन करने के सम्बन्ध में सेवकों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों को विकल्प अर्थात् सोच-विचार नहीं करना चाहिये ।

३१—आत्मसुखानुरोधेन कार्याय नक्तमहश्च विभजेत् । २५-६८

अपने सुख और सुविधा के अनुसार दिन और रात्रि के समय का विभाग कर काम करना चाहिये । क्योंकि उचित रूप से विभाग कर काम करने से स्वास्थ्य भी ठीक रहता है और सब काम भी समुचित रूप से होते रहते हैं ।

३२–अवश्यकर्तव्ये कालं न यापयेत् । २५-७१

जो काम अवश्य करना हों उसमें व्यर्थ समय नहीं बिताना चाहिये ।

३३—आत्मरक्षायां कदाचिदपि न प्रमाद्येत् । २५-७२

अपने शरीर और स्वास्थ्य की रक्षा के सम्बन्ध में कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । क्योंकि शरीर और स्वास्थ्य के अच्छा रहने पर ही कोई भी व्यक्ति संसार में कुछ काम कर सकता है।

३४–बुद्धियुद्धेन परं जेतुमशक्तः शस्त्रयुद्धं प्रवर्तयेत् । ३०-४

अपने विरोधी को पराजित करने के लिये पहले बुद्धि-युद्ध से ही काम लेना चाहिये । जब बुद्धि से काम न चले तभी अन्त में शस्त्रयुद्ध का सहारा लेना चाहिये ।

३५–दीपशिखायां पतंगवत् एकान्तिके विनाशे अविचारम् अपसरेत् । ३०-१४

जिस युद्ध में, दीपशिखा में पतंग की भाँति, अपना विनाश सर्वथा सुनिश्चित हो वहाँ से बिना सोचे-विचारे तुरन्त हट जाना चाहिये ।

३६–वरम् अल्पमपि सारं बलं, न भूयसी मुण्डमण्डली । ३०-१६

युद्ध में यदि थोड़े भी बलवान व्यक्ति हों तो अच्छा पर केवल शिर गिनाने के लिये बलहीन बहुत लोगों का रहना अच्छा नहीं।

३७—न अप्रतिग्रहा युद्धमुपेयात्। ३०-१८

जब तक अपने पास पर्याप्त मात्रा में सामग्री तथा सहायक न हों तब तक किसी के साथ युद्ध नहीं करना चाहिये।

३८—सामसाध्यं युद्धसाध्यं न कुर्यात्। ३०-२५

जो काम समझाने-बुझाने से ही सिद्ध हो जाता हो उसके लिये युद्ध नहीं ठानना चाहिये।

३९—विद्विषां चाटुकारं न बहु मन्येत। ३०-४३

शत्रुओं की चाटुकारितापूर्ण बातों से विशेष प्रभावित नहीं होना चाहिये। क्योंकि विरोधी व्यक्ति मुँह पर प्रशंसा करके पीछे से धोखा भी दे सकता है।

४०—अशोधितायां परभूमौ न प्रविशेत् निर्गच्छेद् वा। ३०-४९

यदि शत्रुओं के घर आना-जाना हो तो इस बात का ठीक-ठीक पता लगा लेना चाहिये कि वहाँ जाने-आने से कोई खतरा तो न होगा।

४१—विग्रहकाले परस्मात् आगतं न किञ्चिदपि गृह्णीयात्। ३०-५०

युद्ध के समय में शत्रु-पक्ष से आई हुई किसी वस्तु का ग्रहण नहीं करना चाहिये।

४२—कण्टकेन कण्टकमिव परेण परम् उद्धरेत्।
३०-५५

जैसे काँटे से काँटा निकाला जाता है उसी प्रकार शत्रु को उसके शत्रु के द्वारा ही पराजित करने की चेष्टा करनी चाहिये।

४३—न कस्यापि लेखम् अवमन्येत। ३२-२९

किसी की भी लिखित बातों का अनादर या उपेक्षा नहीं करना चाहिये। क्योंकि जबानी कही हुई बातों की अपेक्षा लिखित बातों की प्रामाणिकता अधिक होती है।

४४—देशानुरूपः करः ग्राह्यः। २६-४२

देश की जैसी आर्थिक परिस्थिति हो उसके अनुरूप ही कर लेना चाहिये।

४५—प्रतिपाद्यानुरूपं वचनम् उदाहर्तव्यम्।

जैसा प्रतिपादनीय विषय हो उसके अनुरूप ही बातें करनी चाहिये।

४६—आयानुरूपो व्ययः कार्यः। २६-४४

जैसा अपना आय हो उसके अनुरूप ही व्यय करना चाहिये।

४७—ऐश्वर्यानुरूपः प्रसादो विधेयः । २६-४५

अपनी आर्थिक शक्ति के अनुरूप ही किसी पर कृपा या उसकी सहायता करनी चाहिये।

४८—शत्रोः मित्रत्वकारणं विमृश्य तथा आचरेत् यथा न वञ्च्येत । २१-८०

अपना विरोधी व्यक्ति यदि मित्र बनने लगे तो उसके कारणों पर पूरा विचार कर उससे मित्रता करनीं चाहिये जिससे कि पीछे धोखा में न पड़ना पड़े।

४९—अनायकां बहुनायकां वा सभां न प्रविशेत् ।

जिस सभा या समाज में कोई नायक ही न हो अथवा जहाँ बहुत नायक हों उसमें नहीं जाना चाहिपे।

५०—ऋणम् अददानः दासकर्मणा निर्हरेत् । ३२-५०

यदि किसी से लिया हुआ ऋण धनाभाव से उसे न लौटाया जा सके तो शारीरिक श्रम द्वारा उसे पूरा कर देना चाहिये।

५१—स्थितैः सह अर्थोपचारेण व्यवहारं न कुर्यात् । ३८-६१

अपने से बड़े लोगों के साथ लेन-देन का व्यवहार नहीं करना चाहिये। क्योंकि बड़े लोगों से रुपया मिलने में कठिनाई होती है और इसे वे उपकार भी नही मानते।

—:०:—

६—आचार्य क्षेमेन्द्र प्रणीत "चारुचर्या" से संकलित शिक्षायें

१–दानं सत्त्वमितं दद्यात् न पश्चात्तापदूषितम् । १८

दान अपनी शक्ति के अनुसार ही देना चाहिये। ऐसा दान नहीं देना चाहिये जिससे पीछे पछताना पड़े।

२–दम्भारम्भोद्यतं धर्मं नाचरेदन्त-निष्फलम् । २१

कोई भी धार्मिक काम दम्भ से नहीं करना चाहिये क्योंकि दम्भ से किया हुआ काम अन्त में निष्फल हो जाता है।

३–अविस्मृतोपकारः स्यात् न कुर्वीत कृतघ्नताम् । २५

उपकार को भूलना नहीं चाहिये, कृतघ्नता नहीं करनी चाहिये।

४–स्त्रीजितो न भवेद्धीमान् गाढराग-वशीकृतः । २६

बुद्धिमान पुरुष को अत्यन्त कामुकता के कारण स्त्री के वशीभूत नहीं होना चाहिये।

५–न बन्धु-सम्बन्धिजनं दूषयेन्न च वर्जयेत् । ३३

किसी यज्ञ-उत्सव आदि में अपने भाई-बन्धुओं तथा सम्बन्धियों को छोड़ना नहीं चाहिये तथा आने पर उनका किसी प्रकार का अपमान नहीं करना चाहिये।

६–न विवादमदान्धः स्यात् न परेषाममर्षणः । ३४

वाद-विवाद के मद में अन्धा नहीं बन जाना चाहिये तथा दूसरों की बातों को शान्तिपूर्वक सुनने और समझने का अभ्यास रखना चाहिये ।

७–नाऽत्यर्थमर्थार्थनया धीमानुद्वेजयेज्जनम् । ३७

समझदार व्यक्ति को अत्यधिक आर्थिक याचना द्वारा किसी को उद्विग्न नहीं करना चाहिये ।

८–वक्रैः क्रूरतरैर्लुब्धैर्न कुर्यात् प्रीति-संगतिम् । ३८

कुटिल क्रूर और लालची लोगों के साथ प्रेम अथवा संगति नहीं करनी चाहिये ।

९–कुर्याद् वियोगदुःखेषु धैर्यमुत्सृज्य दीनताम् । ४०

वियोग की दुःखद अवस्था में दीनता का परित्याग कर धैर्य धारण करना चाहिये ।

१०–न क्रोधयातुधानस्य धीमान् गच्छेदधीनताम् । ४१

बुद्धिमान पुरुष को क्रोधरूपी राक्षस के कभी अधीन नहीं होना चाहिये ।

११–न कदर्यतया रक्षेल्लक्ष्मीं क्षिप्रपलायिनीम् । ४६

कृपणता करके धन का संग्रह नहीं करना चाहिए क्योंकि लक्ष्मी बहुत चंचल होती है। वह हमेशा एक जगह नहीं रहती ।

१२–शक्तिक्षये क्षमां कुर्यात् नाऽशक्तः शक्त-
माक्षिपेत् । ४७

जब अपनी शक्ति क्षीण हो जाय तो मनुष्य को सहन-शील हो जाना चाहिये और असमर्थता की अवस्था में समर्थ मनुष्यों के साथ बिगाड़ नहीं करना चाहिये।

१३–अत्युन्नत-पदारूढ़ः पूज्यान्नैवाऽवमानयेत् । ५७

अत्यन्त उन्नत पद पाकर भी पूज्य और मान्य पुरुषों का अपमान नहीं करना चाहिये।

१४–वस्तु देयं स्वयं दद्यात् बलाद्यद् दापयेत् परः। ६८

जो वस्तु दूसरे के कहने पर जबर्दस्ती देनी पड़े उसे स्वयं ही दे देना चाहिये।

१५–साधयेद् धर्मकामार्थान् परस्परमबाधकान् । ६९

धर्म, अर्थ, काम इन तीनों की परस्पर बाधा न पहुँचाते हुए उनका साधन और सम्पादन करना चाहिये।

१६–स्वकुलन्यूनतां नेच्छेत् तुल्यः स्यादथवा-
धिकः । ७०

अपने कुल की वर्तमान स्थिति से न्यून होने की इच्छा नहीं रखनी चाहिये। भरसक तो उसे बढ़ाने की ही चेष्टा करनी चाहिये पर बढा न सके तो कम से कम उतना तो अवश्य रखना चाहिये।

१७–आपत्कालोपयुक्तासु कलासु स्यात् कृतश्रमः । ७२

कुछ ऐसी कलाओं को अवश्य सीखे रहना चाहिये जो संकटों के समय काम में आ सकें।

१८–बन्धूनां वारयेद् वैरं नैकपक्षाश्रयो भवेत् । ७३

यदि भाई-बन्धुओं में झगड़ा लग जाय तो उसे रोकने का प्रयत्न करना चाहियें, किसी एक पक्ष की ओर नहीं होना चाहिये।

१९–जन्मावधि न तत् कुर्यादन्ते सन्तापकारि यत् । ८४

अपने जीवन भर में ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिये जिससे अन्त में दुःख और सन्ताप भोगना पड़े।

—:o:—

श्री विष्णुशर्मा प्रणीत "पञ्चतन्त्र" से संकलित शिक्षायें

१—न स्वल्पस्य कृते भूरि नाशयेन् मतिमान्नरः । १-२३

बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि वह थोड़े से लाभ के लिये अधिक द्रव्य की हानि न करे।

२—वचस्तत्र प्रयोक्तव्यं यत्रोक्तं लभते फलम् । १-३९

कोई बात उसी जगह कहनी चाहिये जहाँ कहने से उसका कुछ फल हो, अर्थात् वह निरर्थक न जाय।

३--साम्नैवादौ प्रयोक्तव्यं कार्यं कार्य-विचक्षणैः ।

१-४२४

कार्य-कुशल पुरुषों को पहले शान्ति से ही किसी काम कों सिद्ध करने का प्रयास करना चाहिये। जब शान्ति से काम सिद्ध न हो तभी दूसरे उपायों का अवलम्बन करना चाहिये।

४--बहवो न विरोद्धव्या दुर्जया हि महाजनाः ।

३-१२३

बहुत लोगों से विरोध नहीं करना चाहिये क्योंकि एक

आदमी के लिये बहुत लोगों को हराना बहुत कठिन होता है।

५–सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः ।

४-२८

जहाँ सर्वनाश की अवस्था आ जाय वहाँ बुद्धिमानों को आधा देकर कम से कम आधे की रक्षा करने का प्रयत्न करना चाहिये ।

—:०:—

८—गुमानी कवि प्रणीत "उपदेशशतकम्" से संकलित शिक्षायें

१—न संकटेऽपि त्यजेद् धैर्यम् । २

संकट में भी धैर्य (धीरज) का परित्याग नहीं करना चाहिये, क्योंकि मनुष्य धैर्य से ही संकटों को पार कर पाता है।

२—नहि निजबन्धुर् विरोद्धव्यः । ३

अपने भाई-बन्धुओं के साथ विरोध नहीं करना चाहिये, क्योंकि बन्धु-विरोध बहुत ही अनर्थकारी और कुल को विनष्ट करनेवाला होता है।

३—जनापवादाद् भजेद् भीतिम् । ५

लोकापवाद (बदनामी) से डरे रहना चाहिये। ऐसा कोई भी काम करने से बराबर बचाना चाहिये जिससे लोकापवाद होने का डर हो।

४—प्राप्तैश्वर्यो न दृप्तः स्यात् । ६

ऐश्वर्य पाकर अभिमान नहीं करना चाहिये।

५—न दुर्जनस्यान्तिके निवसेत् । ७

दुर्जनों के समीप नहीं रहना चाहिये।

६—साम्ना मूर्खं वशे कुर्यात् । ८

मूर्खको समझा-बुझाकर वश में करना चाहिये। उससे लड़ना-झगड़ना नहीं चाहिये।

७—मूढमतिर् नोपदेष्टव्यः । ९

मूढ़ लोगों को उपदेश नहीं देना चाहिये, क्योंकि वे अच्छे उपदेश पर भी ध्यान नही देते।

८—स्त्रीषु न कुर्वीत विश्वासम् । १०

सब प्रकार की स्त्रियो में विश्वास नहीं करना चाहिये। ऐसा करने से मनुष्य को धोखा में पड़ना पड़ता है।

९—न बलोद्रिक्तेन योद्धव्यम् । ११

जो व्यक्ति अपने से अधिक बलवान हो उससे लड़ाई नहीं ठाननी चाहिये।

१०—विपदि विजह्यात् न शूरत्वम् । १२

विपत्ति में शूरता का परित्याग नहीं करना चाहिये। यथाशक्ति और अन्तिम क्षण तक विपत्ति का सामना करना चाहिये।

११—कर्तव्यं भाषितं सुहृदाम् । १६

मित्रों का कथन मानना चाहिये।

१२—न महान्तं क्वापि गर्हेत । १७

बड़े लोगों की कभी निन्दा नहीं करनी चाहिये।

१३—समानदुःखः सखा कार्यः । ९

ऐसे व्यक्ति से मित्रता करनी चाहिये जो अपने दुःख के समान दुःख से पीड़ित हो, क्योंकि समान दुःखवालों

में सहानुभूतिकी भावना अधिक होती है। घायल को गति घायल जाने।

१४—भजेत् अवस्थोचितां वृत्तिम् । २०

अपनी जब जैसी अवस्था हो उसके अनुरूप ही अपना व्यवहार रखना चाहिये।

१५—कार्यं सहसा न विदधीत । २१

कोई काम सहसा नहीं कर बैठना चाहिये। जो कुछ काम करना हो, सोच विचार कर ही करना चाहिये।

१६—गुरूक्तमविचारितं कुर्यात् । २२

गुरुजनों की आज्ञा का पालन बिना सोचे-विचारे करना चाहिये।

१७—न चिकीर्षेत् दुस्तरं कर्म । २४

जो अत्यन्त दुष्कर काम हो उसे करने की इच्छा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उसमें सफलता नहीं मिलती और श्रम तथा समय दोनों बेकार जाते हैं।

१८—दुष्टे दण्डः प्रयोक्तव्यः । २५

दुष्ट लोगों के साथ दण्ड का ही प्रयोग करना चाहिये, क्योंकि बिना दण्ड दिये वे सुमार्ग पर नहीं आते।

१९—दीनो रिपुरप्यनुग्राह्यः । २६

शत्रु भी यदि दीन हो गया हो तो उस पर अनुग्रह करना चाहिये।

२०—पापं कृत्वाऽनुतप्येत । २८

यदि अपने से कोई अनुचित काम हो जाय तो उसके लिये पश्चात्ताप करना चाहिये।

२१—दुःखितमनुदुःखितो भूयात्। ३१

दुखी लोगों के साथ समवेदना प्रगट करनी चाहिये।

२२—विरमेदसमाप्य नाऽऽरब्धम्। ३२

प्रारम्भ किए हुए काम को बिना पूरा किए उससे विरत नहीं होना चाहिये।

२३—धर्मं चार्थं च सेवेत। ३४

धर्म और अर्थ दोनों का साथ-साथ सेवन करना चाहिये।

२४—श्रयेत् महान्तं महत्त्वाय। ३५

महान् बनने के लिए महान् पुरुषों का आश्रय लेना चाहिए।

२५—प्रष्टव्याः सत्पथं वृद्धाः। ३६

सम्मार्ग के विषय में वृद्ध लोगों से उपदेश लेना चाहिए।

२६—स्वात्मानं सर्वतो रक्षेत्। ३७

अपनी रक्षा सब प्रकार से करनी चाहिये।

२७—श्रयेत सन्मित्रमापत्सु।

आपत्ति के समय सन्मित्र का सहारा लेना चाहिये।

२८—धुर्यः कार्ये नियोक्तव्यः। ४०

किसी भी काम में समर्थ पुरुष को ही नियुक्त करना चाहिये, असमर्थ और आयोग्य पुरुष को नहीं।

२९—न विनीतं विश्वसेत् धूर्तम् । ४१

धूर्त आदमी यदि बहुत विनीत और मधुरभाषी हो तब भी उसका विश्वास नहीं करना चाहिये।

३०—वसेन्न राष्ट्रे कुभूपाले । ४२

उस राष्ट्र में नहीं रहना चाहिये जहाँ का शासक न्यायी न हो।

३१—न विदध्यात् क्रोधमस्थाने । ४३

बिना अवसर के क्रोध नहीं करना चाहिये।

३२—शरणमुपेतो न हातव्यः । ४४

जो व्यक्ति शरण में आ गया हो उसका परित्याग नहीं करना चाहिये।

३३—न कुत्सित कर्म कुर्वीत । ४५

निन्दित कर्म नहीं करना चाहिये।

३४—नेयः सद्भिः सह समयः । ४६

सज्जनों के साथ समय बिताना चाहिये।

३५—आकारैरिङ्गितं विद्यात् । ४७

आकार देखकर ही अभिप्राय समझ लेना चाहिये।

३६—दुष्टजनं दूरतः प्रणमेत् । ४८

दुष्ट लोगों को दूर से ही प्रणाम कर लेना चाहिये। उनके साथ किसी प्रकार का भी सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये।

३७—पुरुषान् अभिवादयेत् महतः । ५८

अपने से श्रेष्ठ पुरुषों का अभिवादन करना चाहिये।

३८—परस्त्रियं नाभिकाङ्क्षेत । ५३

दूसरे लोगों की स्त्रियों की आकांक्षा नहीं करनी चाहिये।

३९—नैको रिपुमण्डलं प्रविशेत् । ५४

शत्रुओं के समूह में अकेले प्रवेश नहीं करना चाहिये।

४०—दुरवस्थो न प्रकाशः स्यात् । ५५

अपनी दीन अवस्था को सबके सामने प्रकट नहीं करना चाहिये।

४१—घोरमपि स्वं चरेद्धर्मम् । ५६

अपना धर्म और कर्त्तव्य कठिन हो तब भी उसका पालन करना चाहिये। अपने कर्त्तव्य से, चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो, विचलित नहीं होना चाहिये।

४२—योग्यं योग्याय दातव्यम् । ५७

जो वस्तु जिसके योग्य हो उसे उसी को देना चाहिये।

४३—धीमान् मद्य न सेवेत । ५८

बुद्धिमान पुरुष को मद्य आदि किसी भी मादक द्रव्य का सेवन नहीं करना चाहिये।

४४—क्वापि न गच्छेद् अनाहूतः । ५९

बिना बुलाये कहीं नहीं जाना चाहिये। किसी विशेष अवसर पर बिना निमन्त्रण या सूचना के दूसरों के घर नहीं जाना चाहिये।

४५—विजितोऽप्याशङ्कनीयोऽरिः । ६१

पराजित शत्रु से भी डरकर—सावधान होकर रहना चाहिये। क्योंकि असावधान रहने पर शत्रु पुनः मौका पाकर आक्रमण कर सकता है।

४६—न कोपयेत् तापसं शान्तम् । ६२

शान्त और तपस्वी पुरुष को कुपित नहीं करना चाहिये।

४७—भेतव्यं दुर्जयात् कामात् । ६३

काम बड़ा ही दुर्जय है। इससे खूब डरकर और बचकर रहना चाहिये।

४८—न वहेद् गर्वं बुधो मनसा । ६४

बुद्धिमान पुरुष को मन में भी किसी बात का अभिमान नहीं रखना चाहिये।

४९—पुंसा व्यवसायिना भाव्यम् । ६५

मनुष्य को व्यवसायी-उद्यमी होना चाहिये। सदा कोई न कोई उद्यम करते रहना चाहिये। बेकार नहीं रहना चाहिये।

५०—न वाग्विवादं शठैः कुर्यात् । ६७

दुर्जनों के साथ वाद-विवाद नहीं करना चाहिये।

५१—क्रोधाऽविष्टोऽनुनेतव्यः । ६९

क्रुद्ध पुरुष को शान्त करने का प्रयत्न करना चाहिये, उभाड़ने का नहीं।

५२—क्षमिणा पुरुषेण भवितव्यम् । ७०

मनुष्य को क्षमाशील—सहिष्णु होना चाहिये। साधारण बातों के लिए तुरन्त क्रोध नहीं कर बैठना चाहिये।

५३—न वैरमुत्पादयेत् स्वस्मात् । ७१

अपनी ओर से किसी से वैर-विरोध नहीं करना चाहिये। जब दूसरा कोई वैर-विरोध करे तभी उसका प्रतीकार करने के लिए कोई प्रयत्न करना चाहिये।

५४—हितं चरेत् कर्म सर्वेषाम् । ७२

जहां तक हो सके सबका हित करना चाहिए। केवल स्वार्थ-साधन में ही रात-दिन नहीं लगा रहना चाहिये।

५५—न नीचमावासयेत् स्वगृहे । ७३

अपने घर में नीच पुरुष को चोर, बदमाश आदि को नहीं बसाना चाहिये।

५६—हठं न कुर्यात् दुरापेऽर्थे । ७४

जो वस्तु बहुत दुर्लभ हो उसके लिए हठ नहीं करना चाहिये।

५७—कार्यार्थी नाऽवहेत् मानम् । ७७

जिस पुरुष को अपना कार्य सिद्ध करना हो उसे बहुत मान-प्रतिष्ठा का ध्यान नहीं रखना चाहिये। दूसरों से जब काम लेना हो तो उनके साथ नम्रता का ही व्यवहार करना चाहिये।

५८—न गते शोको विधातव्यः । ८०

जो बात बीत जाय उसके लिए शोक नहीं करना चाहिये ।

५९—न भाविनं चिन्तयेदर्थम् । ८१

भविष्य का बातों के लिए बहुत चिन्ता नहीं करनी चाहिये । साधारण रूप से भविष्य को ध्यान में रखते हुए वर्तमान में जो आवश्यक और उचित कार्य हो, उसी का सम्पादन करना चाहिए ।

६०—विनयात् संसाधयेत् कार्यम् । ८३

विनयपूर्वक कार्य साधन करना चाहिए । कोई भी काम शान्ति और शिष्टता से करना चाहिए, घबड़ा कर या अशिष्टता और बेढंगापन से नहीं ।

६१—पुरातनीं पालयेत् संस्थाम् । ९०

पुरानी संस्थाओं तथा मर्यादाओं का पालन करना चाहिए । सहसा किसी परम्परागत संस्था या मर्यादा का उलंघन नहीं करना चाहिए ।

६२—न भवेद् विमुखो रणाद्धीरः । ९१

धीर पुरुष को रण से विमुख नहीं होना चाहिये । अपने बल और पौरुष के अनुसार यथासम्भव न्याय के लिए लड़ते रहना चाहिये ।

६३—नीचादपि सद्गुणो ग्राह्यः । ९२

नीच पुरुष से भी सद्गुण ग्रहण करना चाहिये ।

नीच या ऊँच जिस किसी भी पुरुष में कोई अच्छा गुण हो तो वह गुण उससे सीख लेना चाहिए, उसमें अपना अपमान नहीं समझना चाहिये।

६४—मायाविषु नाचरेत् मायाम् । ९३

मायावी लोगों के साथ माया नहीं करनी चाहिये।

६५—पराजयं पुत्रतोऽन्विच्छेत् । ९६

पुत्र से पराजय की कामना करनी चाहिये। प्रत्येक पिता को यह इच्छा करनी चाहिए कि हमारा पुत्र विद्या और गुण में हमसे भी बढ़कर हो।

६६—सुहृदे विनिवेदयेद् दुःखम् । ९७

यदि कोई दुःख हो तो उसे सहृदय व्यक्ति से कहना चाहिए कठोर तथा हृदयहीन व्यक्ति से नहीं।

६७—हितोपदेशं सदा शृणुयात् । १००

हितकर उपदेश सदा सुनते रहना चाहिए। हो सकता है कि उपदेश सुनते-सुनते किसी दिन उनका जीवन पर ऐसा गहरा प्रभाव पड़े कि जीवन में कोई महान् परिवर्तन हो जाय।

———

६—सुभाषित रत्न भाण्डागार से संकलित शिक्षायें

१—चिन्तनीया हि विपदामादावेव प्रतिक्रियाः ।

विपत्ति आने के पूर्व ही उसके प्रतीकार का उपाय सोचना चाहिए ! आग लग जाने पर कूँआ खोदने से काम नहीं चलता ।

२—त्यजेदवृत्तिकं देशम् ।

जिस देश या स्थान में अपनी जीविका न चल सके उस देश को छोड़ देना चाहिये ।

३—वृत्तिं सोपद्रवां त्यजेत् ।

जिस जीविका या नौकरी में किसी प्रकार का उपद्रव या विघ्न-बाधा हो उसे छोड़ देना चाहिये ।

४—त्यजेन्मायाविनं मित्रम् ।

मायावी मित्र का परित्याग कर देना चाहिये ।

५—धनं प्राणहरं त्यजेत् ।

ऐसे धन का परित्याग कर देना चाहिये जिससे प्राणों को किसी प्रकार का खतरा हो ।

६—नासमीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत् ।

जब तक दूसरे स्थान को अच्छी तरह देख और निश्चित न कर ले तब तक पहले स्थान को नहीं छोड़ना चाहिए ।

७—मनसा चिन्तितं कर्म वचसा न प्रकाशयेत् ।

जिस काम को मन में सोचा हो, अभी किया न हो, उसे वचन से प्रकाशित नहीं करना चाहिए । काम हो

जाने के बाद ही उसे कहना अच्छा होता है।

८—असम्भाव्यं न वक्तव्यम्।

असम्भव बातें नहीं कहनी चाहिए।

९—न परस्याऽपराधेन परेषां दण्डमाचरेत्।

दूसरे के अपराध करने पर दूसरे को दण्ड नहीं देना चाहिए।

१०—आपन्नाशाय विबुधैः कर्तव्याः सुहृदोऽमलाः।

बुद्धिमान् पुरुषों को आपत्ति के समय सहायता प्राप्त करने के लिए अनेक सच्चे मित्र बनाने चाहिए।

११—दुष्टे दुष्टं समाचरेत्।

यदि दुष्ट पुरुष अन्य उपायों से न माने तो उसके साथ दुष्टता ही करनी चाहिये।

१२—क्षन्तव्यो मन्दबुद्धीनाम् अपराधो मनीषिणा।

समझदार लोगों को गँवारों द्वारा किए गए अपराधों को क्षमा कर देना चाहिये।

१३—नाऽपृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्नचाऽन्यायेन पृच्छतः।

जब तक कोई व्यक्ति किसी विषय में अपनी ओर से कुछ न पूछे और पूछे भी तो अनुचित ढंग से पूछे तो वहाँ कुछ नहीं बोलना चाहिये।

१४—यस्मिन् कुले यः पुरुषः प्रधानः स सर्वयत्नेन हि रक्षणीयः।

जिस कुल में जो पुरुष प्रधान हो उसकी सब प्रकार से रक्षा करनी चाहिये।

पाठकों से कुछ आवश्यक निवेदन

१. प्रत्येक शिक्षा को शुद्ध शुद्ध पढ़ें और यदि स्वयं ऐसा न कर सकते हों तो किसी संस्कृतज्ञ व्यक्ति से पूछ कर पढ़ने का कष्ट करें।

२. जो शिक्षायें आपके व्यक्तिगत जीवन के लिये अधिक उपयोगी प्रतीत हों उन्हें एक स्थान पर लिख लें और कण्ठस्थ कर लें।

३. जो शिक्षायें आप को सब के लिये उपयोगी प्रतीत हों उन्हें मोटे कागजों पर सुन्दर अक्षरों में लिख कर या लिखा कर अपने घर में और बैठके में लगा दें।

४. जो शिक्षायें समाज में प्रचारित करने की दृष्टि से अधिक उपयोगी प्रतीत हों उन्हें पोस्टर के रूप में एक या दो हजार छपाकर अपने आस-पास बँटवा दें। छपाने की व्यवस्था कार्यालय द्वारा भी की जा सकती है एक हजार पोस्टरों के छपाने में लगभग ५०-६० रुपये लगेंगे।

५. यदि किसी शिक्षा के सम्बन्ध में कुछ पूछना हो तो कार्यालय से पत्र-व्यवहार किया जा सकता है।

—:०:—

संस्कृत प्रेमियों से

यदि आप घर बैठे हँसते-खेलते संस्कृत सीखना चाहते हैं और अपने बच्चों को भी सिखाना चाहते हैं तो कार्यालय द्वारा प्रकाशित —

"हँसते-खेलते संस्कृत"

पुस्तकों को मँगा कर अपनी अभिलाषा पूर्ण करें और सूचीपत्र के लिये आज ही पत्र लिखें यह विनम्र निवेदन है।

निवेदक—

व्यवस्थापक

सार्वभौम-संस्कृत-प्रचार-कार्यालय

डी. ३८/११० हौज कटोरा, वाराणसी